समता ज्योति

वर्ष : 14 अंक : 04 देश के राष्ट्रवादी नागरिकों को समर्पित मासिक-पत्र 25 अप्रेल, 2023

Website: www.samtaandolan.co.in, E-mail: samtaandolan@yahoo.in मूल्य: प्रति अंक-5 रूपये, सालाना- 50 रूपये (चार पेज)

"जातिगत आरक्षण के रास्ते चलना मूर्खता ही नहीं, विध्वंसकारी है।"

-पं. जवाहरलाल नेहरू
(27 जून, 1961 को प्रधानमंत्री के रूप में मुख्यमंत्रियों को लिखे पत्र से)

एक के बाद एक कमीशन का क्या औचित्य है: सुप्रीम कोर्ट

हिन्दू धर्म से इस्लाम या ईसाई धर्म अपनाने वाले दलितों को एससी-एसटी का दर्जा दिए जाने की मांग वाली याचिकाओं संवेदनशीलता को देखते हुए भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश केजी बालकृष्णन की अध्यक्षता में केन्द्र सरकार ने तीन सदस्यीय आयोग का गठन किये जाने पर सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी

नई दिल्ली। धर्म परिवर्तन करने वाले दलितों को आरक्षण की मांग वाली याचिका पर केंद्र सरकार ने अदालत में कहा कि इस मुद्दे के महत्व और संवेदनशीलता को देखते हुए भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश केजी बालकृष्णन की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय आयोग का गठन किया है। इस पर सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस मुद्दे पर कितने कमीशन बनेंगे ?

हिन्दू धर्म से इस्लाम या ईसाई धर्म अपनाने वाले दलितों को एससी-एसटी का दर्जा दिए जाने की मांग वाली याचिकाओं पर सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई हुई। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि वह जुलाई में इस बात पर विचार करेगा कि क्या सरकार द्वारा स्वीकार ना की जाने वाली कमीशन की रिपोर्ट पर भरोसा किया जा सकता है? अगर हां तो किस हद तक। साथ ही प्रकृति और चरित्र को देखते हुए जाति व्यवस्था को इस्लाम या ईसाई धर्म में शामिल किया किया जा सकता है या नहीं ?

अदालत इस मुद्दे पर 11 जुलाई को अगली सुनवाई करेगी। सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस मुद्दे पर कितने कमीशन बनेंगे? एक के बाद एक कमीशन का क्या औचित्य है? ये भी नहीं पता कि वर्तमान कमीशन की रिपोर्ट भी पहले जैसी नहीं होगी? दो दशक बीत चुके हैं। प्रत्येक व्यवस्था का अपना विचार और संदर्भ की शर्तें होंगी। सवाल यह है कि क्या राष्ट्रपति के आदेश में विशेष समुदायों को शामिल करने के लिए रिट जारी की जा सकती है।

याचिकाकर्ता की तरफ से प्रशांत भूषण ने रखा पक्ष

अदालत ने कहा कि रंगनाथ मिश्रा पैनल की रिपोर्ट को स्वीकार नहीं किया गया है तो सवाल यह है कि इस पर कहां तक भरोसा किया जा सकता है? अनुभवजन्य डेटा की खोज की स्थिति क्या है? इस दौरान याचिकाकर्ता के वकील प्रशांत भूषण ने कहा कि यह एक संवैधानिक सवाल है कि क्या राज्य धर्म के आधार पर भेदभाव कर सकता है? सरकार अब कह रही हैं कि उन्होंने दो साल के कार्यकाल के साथ एक नया आयोग नियुक्त किया है। लेकिन क्या अदालत को सरकार के इस बयान पर बार.बार इंतजार करना चाहिए? उन्होंने कहा कि हम शामिल करने के लिए नहीं कह रहे हैं, बल्कि दलित ईसाइयों और दलित मुसलमानों के बहिष्कार को असंवैधानिक, अवैध और मनमाना कह रहे है?

गौरतलब है कि अनुसूचित जाति समुदाय के सदस्य के रूप में नौकरियों और शिक्षा में आरक्षण का संवैधानिक अधिकार केवल हिंदू, सिख या बौद्ध धर्म के लोगों को दिया गया है।

कब दाखिल की गई थी याचिका

याचिका 2004 में दाखिल की गई थी। अदालत ने कहा कि 19 साल हो गए हैं। जस्टिस संजय किशन कौल ने एएसजी केएम नटराज से पूछा कि संविधान मे जो बातें कही गई है उसी के मुताबिक इस मुद्दे को निर्धारित कर सकते हैं यहां यही मुद्दा है। सवाल यह है कि जिस संवैधानिक मुद्दे पर याचिकाकर्ता बात कर रहे हैं। क्या अदालत को कमीशन की रिपोर्ट तक इंतजार करना चाहिए?

केंद्र सरकार ने क्या कहा

केंद्र की ओर से एएसजी के एम नटराज ने कहा कि नया कमीशन नियुक्त किया गया है। वह अपना काम कर रहा है। कोर्ट को कमीशन की रिपोर्ट का इंतजार करना चाहिए। रंगनाथ मिश्रा आयोग ने सभी पहलुओं पर गौर नहीं किया था। इस्लाम और क्रिश्चियनिटी अपनाने वालों को अनुसूचित जाति का दर्जा नहीं दिया जा सकता क्योंकि इन धर्मों में जातीय आधार पर भेदभाव नहीं है। ईसाई या इस्लाम समाज में छुआछूत की दमनकारी व्यवस्था प्रचलित नहीं थी। ईसाई या इस्लामी समाज के सदस्यों को कभी भी इस तरह के पिछड़ेपन या उत्पीड़न का सामना नहीं करना पड़ा है। सिखों, बौद्ध धर्म में धर्मांतरण की प्रकृति ईसाई धर्म में धर्मांतरण से भिन्न रही है। दूसरे धर्म में परिवर्तन करने पर व्यक्ति अपनी जाति खो देता है। कोर्ट राष्ट्रपति के आदेश में बदलाव का निर्देश नहीं दे सकता।

पूरा प्रदेश फिर कहेगा: समता-समता

जयपुर। बधाई हो बधाई। न केवल समता आन्दोलन के प्रत्येक सदस्य को अपितु भारत के प्रत्येक नागरिक को समता आन्दोलन के स्थापना दिवस की बधाई हो। इसी भाव को लेकर समता आन्दोलन के जयपुर प्रदेश मुख्यालय पर कोर कमेटी, कार्यकारिणी और संस्थापक सदस्यों की एक बड़ी बैठक आयोजित की गई।

समता आन्दोलन के राष्ट्रीय अध्यक्ष पाराशर नारायण शर्मा के सानिध्य में आयोजित बैठक का मुख्य विषय राजस्थान भर में 11 मई से शुरू होने वाले एक माह के स्थापना दिवस महोत्सव की तैयारी

करना रहा। सबसे पहले नवनियुक्त कार्यकारी प्रदेश अध्यक्ष नगेन्द्र सिंह शेखावत के मनोनयन का अनुमोदन किया गया। निर्णय हुआ कि जयपुर में स्थापना महोत्सव 14 मई को तोतुका भवन में मनाया जावे। इसके लिए बैठक में एक समिति का गठन किया गया। फण्ड के लिए सात सदस्यों ने रूपये 2100 का योगदान दिया तथा यह भी निर्णय लिया गया कि इसके लिए 500 एवं 100 रूपये के कूपन जारी किये जाये। बैठक में इसके अलावा निम्न निर्णय भी लिये गये :-

* जयपुर में सक्रिय लोगों का नया व्हाटस-एप ग्रुप बनाया जावे।
* जिन नगरों में अध्यक्ष नियुक्त नहीं है उन नगरों में नगर अध्यक्ष बनाया जावे तथा प्रत्येक वार्ड में कार्यकारिणी बनाई जावे।
* महिला संभाग अध्यक्ष नियुक्त एवं सक्रिय किया जावे।
* ईडब्ल्यूएस के पांच मानदण्डों को ओबीसी में भी लागू करवाये जाने का प्रयास किये जावे।
* जयपुर नगर अध्यक्ष के पद हेतु श्री रामप्रकाश सारस्वत के नाम का प्रस्ताव व अनुमोदन किया गया।
* समता ज्योति अखबार को व्यावसायिक बनाया जाए। जिसके लिए रूपये 15 हजार मासिक पर कार्मिक रखने का अनुमोदन किया गया।
* स्थापना महोत्सव पर समता ज्योति का विशेषांक छपवाया जावे।
* बैठक के अन्त में प्रतिवर्ष 1000 रूपये जमा कराने वाले अधिकाधिक सदस्य बनाये जाने के आव्हान के साथ बैठक सम्पन्न हुई।

अध्यक्ष की कलम से

''द्वैत उचित नहीं''

साथियों,

भारतीय सांस्कृतिक मनीषा में द्वैत को मृत्यु से बड़ा माना गया है। जबकि वर्तमान भारतीय राजनेता द्वैत को ही आदर्श मानने लगे है। छल का बड़ा मुद्दा(?) प्रधानमंत्री की डिग्री को लेकर एक छद्म प्रादेशिक सरकार दिल्ली के मुख्यमंत्री का कथित जोश है। वे एक सक्षम अफ्सर होकर, हाईकोर्ट की डांट खाकर भी मानने को तैयार नहीं है कि कानून और भावुकता साथ-साथ नही चल सकते।

मान्य कानून है कि किसी भी निजि जानकारी सार्वजनिक करना आर टी आई कानून से भी प्रमाणित है। फिर भी वे इस मुद्दे को लेकर यहॉ-वहॉ नहीं बल्कि अपनी विधानसभा में भी बहुत कुछ बोल रहे है। यहॉ प्रश्न बनता है कि क्या विधानसभा का पटल इस तरह के कामों के लिए प्रयुक्त किया जाना उचित है।

दूसरी तरफ सुप्रीम कोर्ट के मुखिया मुकदमों के बजाय मध्यम मार्ग की बात करते हैं। यहॉ भी न्याय द्वैत के प्रभाव में दिखाई देता है। मुकदमें अब संजीव प्रक्रिया से हटकर एकदम यांत्रिक हो गये हैं। जजों के पास स्वविवेक होता तो है लेकिन वे इसका प्रयोग करते दिखाइ नहीं देते। अन्यथा बहुत से मुकदमें पहली सुनवाई में ही खारिज हो जाते।

इस तरह का द्वैत सब दूर और बार दिखाई देता है तो साफ लगता है कि भारतीय जन का भगवान और भाग्य के प्रति अटूट विश्वास है। जबकि होना ये चाहिये कि देश की जनता का एकनिष्ठ विश्वास कानून में ही हो।

जय समता

सम्पादकीय

"दोष जातीय समाजों का नहीं"

कठिन है। बहुत कठिन है। सच में विश्वास करना कठिन है कि देश की जनता अपने जिन नेताओं पर विश्वास करती है। वे ही नेता जनता को बहलाने, बरगलाने और गुमराह करने में तनिक भी समय नहीं लगाते हैं। ताजा उदाहरण जाति आधारित जनगणना को लेकर है। हालांकि प्रश्न तो ये होना चाहिये था कि देश की विकास प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु दस वर्षीय जनगणना अभी तक क्यों नहीं हुई? जबकि शोर इस बात पर मचाया जा रहा है कि जाति आधारित जनगणना की जावे। विशेषकर बिहार और राजस्थान में ऐसी मांगे जोर पकड़ती जा रही हैं।

शोर मचाना भी लोकतंत्र का हिस्सा है। लेकिन विवेकहीन शोर का कोई मतलब नहीं होता है। लेकिन ऐसा ही विवेकहीन शोर कुछ साल पहले राजस्थान में एससी/एसटी समाज के लोगों ने मचाया था और प्रदेश मं आरक्षित सीटों को 56 से बढाकर 59 करना पड़ा था। इस बात पर तत्कालीन मुख्यमंत्री भैंरो सिंह शेखावत ने टिप्पणी भी की थी। उस टिप्पणी का भीतरी हिस्सा ये था कि जिन समाजों ने राष्ट्रीय नीति के रूप में परिवार नियोजन को अपनाया वे पुरस्कृत होने के बजाय प्रताड़ित हो गये।

जाति आधारित जनगणना की मांग करने वालों में केवल आवेशित ही नहीं वरन प्रबुद्ध जन भी शामिल हो गये हैं। सागवाडा के एक जातीय सम्मेलन में प्रदेश के कैबिनेट मंत्री बी.डी.कल्ला ने यही मांग कर डाली। ऐसा करते समय वे भूल गये कि उनके अपनी जाति के समाज में संख्या की दृष्टि से कितनी कमी आ चुकी है? इस तरह का अभागा ज्ञान आज हर तरफफैलता दिख रहा है।

क्या, कब, क्यों, किसके, कैसे के पंच ककार को छोड़ना बहुत कठिन है। लेकिन इन्हें सिद्ध करना भी आसान नहीं है। अब इस तथ्य को कौन प्रमाणित कर सकता है कि प्राय: तीन सौ तपस्वी, मनस्वी, तेजस्वी स्वतंत्रता सेनानियों की संविधान सभा ने जिस संविधान की रचना की उसका सारा श्रेय मात्र एक व्यक्ति को सौंपकर कथित राजनेता और पार्टियॉ झूठ को प्रमाणित करने के नित नये औजार गढती है। सुधि लोग स्तब्ध है।

यहां सबसे खास और गम्भीर बात ये है कि जाति आधारित जनगणना की बात जातीय समाजों ने नहीं बल्कि पार्टियों ने उठाई हे। ये इस बात का प्रमाण है कि जातिवाद (?) जातीय समाज नहीं बल्कि पार्टिया रही है। और दोष जातीय समाजों पर मढ दिया जा रहा है। तथ्य है कि अब जातीय जनगणना की मांग साफतौर पर लोकतंत्र को लूटतंत्र में बदलने का दूषित आशय लगता है।

जनता का स्वभाव भूलने का होता है- इस अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता के साथ यह भी जोड़ लेना चाहिये कि जनता को यदि याद दिलाया जावे तो उसे याद भी आ जाता है। अत: अब ये याद दिलाना बिल्कुल आवश्यक हो गया है कि जिन जाति आधारित जनगणना का बेशउर शोर मचाया जा रहा है वह दस साल पहले 2011 में कभी की हो चुकी है और उसके आंकड़ों को सार्वजनिक नहीं करने पर संसद की स्थाई रोक लगी हुई है। ऐसे में जातीय जनगणना की मांग करना संसदीय परम्परा और नियमों का उल्लंघन है। फिर भी यदि वे 65 वर्ष और दूसरे वर्ष की तुलना करना ही चाहते है तो ऐसे नेताओं और उनकी पार्टियों को सुप्रीम कोर्ट में याचिका लगाकर संसदीय रोक को पहले असंवैधानिक घोषित करना होगा। यह सीधा और आसान तरीका नहीं है तो जातीय जनगणना की मांग भी नैतिक और संवैधानिक मानदण्डों का उल्लंघन है। देश के सुधि लागों को इस पर गंभीर चिंतन -मनन करके कोई रास्ता निकालना और घोषित करना चाहिये। देश को ठस दिमाग लोगों का अभ्यारण्य नहीं बनने दिया जाना चाहिये।

जय समता।

- योगेश्वर झाड़सरिया

सांगठिनिक, सामाजिक, आर्थिक, विधिक और सामाजिक मर्यादाओं का प्रमाण समता आन्दोलन

हमने एक बार पहले भी लिखा था कि धरती के टुकड़े को देश नहीं कहा जा सकता। वस्तुत देश एक प्राणवंत शरीर है। हालांकि हमारे देश में प्रतिमाओं की भी प्राण प्रतिष्ठा होती रही है लेकिन देश प्रतिमाओं का आदर्श और जीवों का पुरूषार्थ हुआ करता है। इन अर्थों में यह कहा जा सकता है कि भले ही काल की गति के कारण अखण्ड भारत का स्वरूप सिमट कर छोटा हो गया है लेकिन इसकी मूल चेतना और पुरूषार्थ अभी भी हजारों साल पुरानी परम्परा का साक्षात प्रतिमान है।

हालांकि यह कहा जाता है कि धरती और दुनिया को लोकतंत्र की परिभाषा अमरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने दी थी लेकिन सच कहा जाए तो भारत में जो गणतंत्रामक व्यवस्था हुआ करती थी उसे ही आगे जाकर प्रजातांत्रिक परिभाषा के रूप में स्थापित किया गया। इसमें कोई आश्चर्य भी नहीं है क्योंकि गुलामों के आदर्श और चिंतन पर समर्थ लोगों का हमेशा से अनचाहा आधिपत्य और एकाधिकार रहता आया है। इसलिए बहुत कुछ ऐसा है जो मूल रूप में हमारा होते हुये भी पाश्चात्य या यू कहे कि समर्थ लोगों की बपोती के रूप में अब दोहराया जा रहा है।

यह बेहद दुखद और पीड़ादायक है कि हमारे यहा जैसे-जैसे खोखले लोग ऊपर जाते रहे वैसे-वैसे भारतीय मनीषा और उसका तत्व तिरोहित होता चला गया। उदाहरण के रूप में मनुस्मृति को लिया जा सकता है। वैसे तो याज्ञवल्क्य, वशिष्ठ आदि-आदि अनेक ऋषियों की स्मृतियॉ अब भी वर्तमान है लेकिन मनु स्मृति पर जितना विवाद हुआ है अन्य किसी पर नहीं हुआ। दूसरी तरफ यह भी सच है कि सारी स्मृतियॉ मनुस्मृति की ही एक तरह से पुनर्रावृति है। आज हम भले ही इस ग्रंथ के बारे में कुछ भी सोचे या कहे लेकिन तथ्य यही है कि दुनिया में मानव स्वभाव को संगहीताबद्ध करने का यह ग्रंथ पहला प्रयास है। और यदि सुनने की सामर्थय हो तो यह भी कहा जा सकता है कि मनुस्मृति दुनिया का पहला संविधान है।

भारत में आज जिसे शोध कहा जाता है वो प्राचीन काल की चिंतन और मनन प्रक्रिया का लिखित स्वरूप है। इस दृष्टि से देखे तो भारतीय मनीषा के जो लिखित ग्रंथ है उन पर हमसे अधिक ध्यान यूरोप वालों ने दिया है। यह चौकाने वाले तथ्य है कि श्रीराम की कथा जो भारत के कण-कण में रची-बसी है उसके मानक अध्येता फादर कामिल बुलके को माना जाता है।

वर्तमान में जिस तरह की राजनैतिक परिस्थितियॉ हर ओर दिखाई दे रही है उससे पूरा देश और प्रत्येक नागरिक असंमजस ही नहीं हतप्रभ दिखाई देता है। यह मन को बेहद टीस देने वाला है कि दुनिया के सबसे बड़े लिखित संविधान को लिखने में दो साल ग्यारह महिने और सतराह दिन लगे। और इस पूरी प्रक्रिया में 298 लोगों की संविधान सभा ने लगातार बैठके करके हर शब्द और विषय पर तिखी बहस करके संविधान का खाका तैयार किया। आगे इसके लिए आठ ड्राफ्ट कमेटियॉ बनी। और पता नहीं कहां, क्या, किसके द्वारा किया गया कि इस पूरी संविधान बनाने की प्रक्रिया का श्रेय केवल एक आदमी को देकर हर गली-चौराहे पर उस व्यक्ति की प्रतिमा स्थापित कर दी गई। दुनिया के किसी भी देश में स्वतंत्रता सेनानियों का ऐसा उपहास शायद ही कहीं हुआ हो।

आज न जाने क्यूं लगता है कि शास्त्र इतिहास और पूराण से ऊपर झूठ पुन: प्रतिष्ठा पा गया है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि आजादी के ठीक बाद से भारत ने लोकतंत्र की जिस अवधारणा को स्वीकार किया था वो न जाने कैसे राजतंत्र की प्रतिध्वनि बन गया। जबकि संविधान बार-बार जनप्रतिनिधित्व कानून की बात करता है लेकिन हमारी विधानसभाएँ, लोक सभा, बड़ी अदालते सभी लोक प्रतिनिधियों को राजनेता के रूप में संबोधित करने लगी है। अब जब लोक प्रतिनिधि को राजप्रतिनिधि मान ही लिया गया है भले ही वो झूठ ही हो तो राजप्रतिनिधि का जो स्वभाव होता है वो सब दूर सच के रूप में स्थापित हो गया है। यह गलत भी नहीं है क्योंकि राजनैतिक आचार्य शांकर देव का कथन है "राजनिति राक्षसैर शास्त्र" इस दृष्टि से लोकतंत्र का प्रतिनिधि राजप्रतिनिधि के रूप में जो भी कृत्य करता है वह न्याय संगत हो जाता है।

बेशक लोकतंत्र में सर्वोच्च सत्ता न्याय की होती है लेकिन निरपेक्ष भाव से देखे तो मुंशीफ कोर्ट से लेकर सुप्रीम कोर्ट के बीच में जो न्यायतंत्र का जंजाल है वो सच की खोज में बार-बार अड़चने पैदा करता है। यह शुभ और अनुकरणीय स्थिति नहीं है। ऐसी स्थिति के बदलाव के लिए ही समता आन्दोलन जैसी संविधानिक सुचिता को बहाल करने के लिए संघर्ष करने वाले प्रकल्पों की भारत को नितांत आवश्यकता है। विगत 16 सालों में सांगठिनिक , सामाजिक, आर्थिक, विधिक और सामाजिक मर्यादाओं की जैसी पारदर्शिता की प्रतिष्ठा समता आन्दोलन ने की है वह शोध करने पर निश्चय ही अनुकरणीय उदाहरण बनेगी।

यूं कहने मात्र को कुछ भी कहा जा सकता है लेकिन तथ्य यह है कि इसके साथ के बने हुये अनेक छोटे-मोटे संगठन आज इतिहास के पन्नों में गायब हो चुके है। लेकिन समता आन्दोलन वर्तमान के शिलालेख पर भविष्य का सुलेख लगातार लिखता जा रहा है। न्यायिक व्यवस्था की जो मर्यादायें और छुपी मर्यादायें है उनके बीच से संतुलन रखते हुये अपनी बात को सिद्ध करना इस आन्दोलन की विशेषता रही है। हालांकि यह सच है कि अंतत: लोकतंत्र के चारों खम्बों में सबसे सबल और प्रबल स्तम्भ संसद ही सिद्ध होती है। शायद इसीजिए बार-बार न्याय पालिका से स्वीकृति के बावजूद ऐसे बहुत से प्रश्न है जो संसद द्वारा बिना उत्तर दिये या तो फाइल कर दिये गये या उन्हें बदल दिया गया।

आज के कालखण्ड में इलेक्ट्रोनिक मीडिया एक नई तरह की मर्यादा की संरचना करता जा रहा है। जिस पर अनेक प्रश्न है, अनेक जिज्ञासाऐं है, अनेक आरोप है। इन सब को दरकिनार करते हुए इलेक्ट्रोनिक मीडिया ना केवल प्रिन्ट मीडिया की सुचिका को नष्ट कर रहा है बल्कि भारतीय गरिमा और लोकतंत्र की मर्यादा को भी नुकसान पहुंचा रहा है। लेकिन डरा हुआ नेता और तामसिक स्वार्थ में डूबी पार्टियॉ इतना मादा नहीं रखती है कि मीडिया को नियंत्रित किया जा सके। ये वे हालात है जो आज पूरे देश के साथ समता आन्दोलन के हर सदस्य के लिए गंभीर चिंतन और मनन का अवसर देते है। इसलिये 16वां स्थापना दिवस पिछले 15 से अधिक महत्वपूर्ण और उपयोगी हो इसके लिए हम सब का दायित्व है कि बिना भय और भिरूता के संविधान की ताकत को समझे और अपने अधिकार को लेने के लिए खुल कर बोले, सामने आकर बोले।

- समता डेस्क

समता आन्दोलन के हर एक सदस्य और देश के प्रत्येक नागरिक को 16वें स्थापना दिवस की अनन्त बधाई और शुभकामनाएं।

पौराणिक कथन : "चतुष्ट्य"

चार पुरूषार्थ- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।
चार वर्ण - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र।
चार आश्रम - ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास।

जो नंगे पांव खाली पेट,
राजमार्ग पर दौड़ सकेगा।
बिना कुदाली बिना हथौड़े,
सब काराएं तोड़ सकेगा।।

कविता

गधे पंजीरी खाते है??

महिमा युग की बड़ी निराली
नहीं समझ में आती है।
हर तबके को धनलोलुपता
मक्कारी ही भाती है।।
भौंदू लोग बैठ सत्ता में
अपनी अपनी हांक रहे।
साधारण भी सावित्री को
सत का पाठ पढ़ाती है।।
जब से जातिगत आरक्षण
दस दस साल बढ़ाया है।
प्रतिभाओं की आशाओं पर
बज्राघात गिराया है।।
सोच नहीं है देशहित की
असुरावृत्ति धारे है।
एक लक्ष्य सत्ता पाना ही
इनके मन को भाया है।।
मूरख मठाधीश बन बैठे,
ज्ञानी चुप हो जाते है।
कोयल भूली ऋतुराज,
अब उल्लू राग सुनाते हैं।।
मुर्गे बाग लगाना छोड़े
मोर नाचते नहीं यहां।
घोड़े कैद हुए पिंजरे में,
गधे पंजीरी खाते हैं।।
खाते रहे पंजीरी गर्दभ
ज्यादा नहीं खा पाएंगे।
अब आंदोलन जोर जुल्म की
टक्कर में हम आएंगे।।

आभार. वैद्यजी भगवान सहाय पारीक, जयपुर

'डा. हरिओम पंवार की कविता'

जहाँ बुद्धि तोली जाती है
जाति.सने आधारों से
सत्ता की नैया चलती है
आरक्षित पतवारों से
कूटनीतियाँ तोड़ रही है
निर्धन की खुद्दारी को
और योग्यता झेल रही है
कुर्सी की गद्दारी को
यहाँ परीक्षा से पहले
परिणाम सुरक्षित होता है
मिट्टी के माधो का भी
सम्मान सुरक्षित होता है
आरक्षण कानून वतन की
प्रतिभा का हत्यारा है?
फिर भी सारे जहाँ से अच्छा
हिन्दुस्तान हमारा है??

दूसरा उपाय या रास्ता

गतांग से आगे:

संक्षेप में कहें तो देश की समस्त जनता को अभाव एवं गरीबी से ऊपर उठाया जाना चाहिए। जन्म के आधार पर उत्पन्न होनेवाली असमानताओं को कम किया जाना चाहिए ।

किंतु यदि हम पिछले सौ वर्षों के इतिहास पर भी दृष्टि डालें तो पता चलेगा कि असमानता हर मानव में हमेशा बनी ही रहती है । इस इतिहास से हमें यह भी पता चलता है कि व्यक्तिगत, सामूहिक अथवा शासनगत स्तर पर जिन लोगों अथवा आंदोलनों ने असमानता को मिटाने और समानता स्थापित करने का सबसे ज्यादा दावा किया है, वे स्वयं असमानता को बढावा देने वाले रहे हैं और असमानता के सिद्धांत पर ही वे स्थापित भी रहे हैं। इतना ही नहीं, समानता का राग अलापते हुए अन्य मौलिक आदर्शों-मूल्यों जैसे स्वतंत्रता की अनदेखी भी की जाती रही है । गरीबी दूर की जानी चाहिए; जाति-जन्म के आधार पर भेदभाव कम किया जाना चाहिए । इसके लिए जैसा संविधान-निर्माताओं ने परिकल्पना की थी, जाति-बहिष्कार और भेदभाव को समाप्त किया जाना चाहिए तथा साथ ही वंचित वर्गों को सकात्मक मदद पहुँचाई जानी चाहिए, ताकि वे अन्य वर्गों की बराबरी में आ सकें ।

किंतु यह सब एक धीमी प्रक्रिया होनी चाहिए, जल्दबाजी करने से सरकारी व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पडेगा।

आर्थिक पैमाने के आधार पर वंचित वर्ग में शामिल किए जानेवाले लोगों को सरकार हर संभव सहायता पहुँचाए, जिससे उनका जीवन-स्तर ऊपर उठाया जा सके।

नि:शुल्क एवं अतिरिक्त कोचिंग की सुविधा, सस्ता और अतिरिक्त पोषण, आवासीय सुविधा या इस प्रकार की अन्य जरूरतें पूरा करके, किंतु नौकरी में आरंभिक नियुक्ति के मामले में एकमात्र पैमाना यही होना चाहिए । अभ्यर्थी संबंधित कार्य को संपन्न करने की योग्यता नियुक्ति के समय रखता है या नहीं ।

आरंभिक नियुक्ति के बाद भी पूरे सेवाकाल के दौरान पदोन्नति आदि के लिए भी अभ्यर्थी की योग्यता और कार्य-अभिलेख को ही मानदंड बनाया जाना चाहिए ।

अभ्यर्थी का चयन करते समय उसके मूल्यांकन का आधार यही होना चाहिए कि वह संबंधित पद के लिए आवश्यक अर्हताएँ पूरी करता है या नहीं; यदि आवश्यक हो तो इस मूल्यांकन पद्धति की समय-समय पर समीक्षा करके उसमें आवश्यक सुधार लाए जाएँ, ताकि अधिक-से-अधिक योग्य अभ्यर्थियों का चयन हो सके ।

लेकिन किसी भी स्थिति में और किसी भी स्तर पर अर्हता-शर्तों में ढील नहीं दी जानी चाहिए ।

यदि हम पिछले सौ वर्षों के इतिहास पर भी दृष्टि डालें तो पता चलेगा कि असमानता हर मानव में हमेशा बनी ही रहती है । इस इतिहास से हमें यह भी पता चलता है कि व्यक्तिगत, सामूहिक अथवा शासनगत स्तर पर जिन लोगों अथवा आंदोलनों ने असमानता को मिटाने और समानता स्थापित करने का सबसे ज्यादा दावा किया है, वे स्वयं असमानता को बढावा देनेवाले रहे हैं और असमानता के सिद्धांत पर ही वे स्थापित भी रहे हैं ।

जो भी मानदंड अपनाए जाएँ, वे सबके लिए समान होने चाहिए ।

और जब कभी किसी व्यक्ति या समूह को सहायता दी जाए- चाहे वह सेवा क्षेत्र की, बात हो या किसी और क्षेत्र की, तब सरकार यह सुनिश्चित करने की व्यवस्था करे कि उसके द्वारा उपलब्ध कराई जानेवाली सहायता जरूरतमंदों तक पहुँच रही है । समय-समय पर उसकी समीक्षा भी की जानी चाहिए और वास्तविक स्थिति से संबंधित रिपोर्ट प्रकाशित की जानी चाहिए ।

अनिवार्यताएँ

यह सब सुनिश्चित करने के लिए तीन बातें जरूरी हैं- पहली बात, जैसा समीक्षा से स्पष्ट हो गया है, न्यायाधीशों को अपनी प्रवृति का विश्लेषण करना होगा, जिसके चलते वे राजनीतिक वर्ग की दुष्प्रवृतियों को बढावा देते रहे हैं-

* उन्हें यह देखना होगा कि वे लोकवाद से प्रभावित नहीं हैं ।

अभ्यर्थी का चयन करते समय उसके मूल्यांकन का आधार यही होना चाहिए कि वह संबंधित पद के लिए आवश्यक अर्हताएँ पूरी करता है या नहीं; यदि आवश्यक हो तो इस मूल्यांकन पद्धति की समय-समय पर समीक्षा करके उसमें आवश्यक सुधार लाए जाएँ, ताकि अधिक-से-अधिक योग्य अभ्यर्थियों का चयन हो सके। लेकिन किसी भी स्थिति में और किसी भी स्तर पर अर्हता-शर्तों में ढील नहीं दी जानी चाहिए ।

* उन्हें मौजूदा मामले पर कोई टिप्पणी या निर्देश देने से पहले यह देखना होगा कि उसका बाद में उठनेवाले मामलों के संदर्भ में क्या परिणाम होगा; और जैसा हम कुछ न्यायाधीशों के शब्दाडंबर का उदाहरण देख चुके हैं, उन्हें इस ओर भी ध्यान देना होगा ।

* उन्हें अपने उन आधार वाक्यों या टिप्पणियों का विश्लेषण करना चाहिए, जिन्हें लेकर राजनीतिक वर्ग देश को इस प्रकार चोट पहुँचा रहा है, और यह विचार करना चाहिए कि ऐसे में वे किसी काल्पनिक क्रांति का माध्यम बनकर देश का हित कर सकते हैं या उसे सुरक्षित रखकर ।

* सामाजिक क्रांति की बात करके प्रगतिवादी न्यायाधीश जो क्रांतिकारी घोषणाएँ करते रहे हैं, उनसे संविधान की आत्मा को चोट पहुँचाने की योजना को एक प्रकार का तार्किक आधार ही मिला है । अंतत: इससे राजनीतिक वर्ग की दुष्प्रवृति को भी बल मिला है । सन् 1960 के दशक में भी वास्तव में जो जरूरत थी वह भी ऐसी घोषणाओं या धारणाओं की, जो राजनीतिक वर्ग को रूककर पश्चावलोकन करने के लिए विवश कर सकती, ऐसी घोषणाओं या धारणाओं की आवश्यकता नहीं थी जो राजनीतिक वर्ग को उसी गलत दिशा में आगे बढने के लिए प्रोत्साहित करे । आज की परिस्थितियों में- जब राजनीतिक वर्ग गलत दिशा की ओर पूरी तरह से प्रवृत हो चुका है, जब यह राजनीतिक वर्ग इस प्रकार भटक चुका है कि कोई छोटा सा समूह या वर्ग भी उसे इस दिशा में काफी आगे धकेल सकता है, जब वह इतना छिद्रान्वेषी हो गया है कि उसके सर्वोच्च प्रतिनिधि व्यक्तिगत रूप में यह कहते हुए भी कि अमुक कदम से अंतत: देश को क्षति पहुँचेगी, उस कदम के पक्ष में आवाज बुलंद करते हैं और ऐसा करके वे संबंधित वर्ग या समूह की नजरों में स्वयं को उनका समर्थक बनाने की कोशिश करते हैं- इसकी आवश्यकता और भी ज्यादा है । कुल मिलाकर तथ्य यह है कि संरक्षण सदैव ही न्यायपालिका की उपयुक्त भूमिका रही है और आज भी यह आवश्यक है ।

* उदारवादी न्यायाधीशों को विशेष रूप से अपनी उन टिप्पणियों और आधार वाक्यों तथा निर्णयों पर विचार करना चाहिए, जिनसे राजनीतिक वर्ग के लिए आधा रास्ता पहले ही तैयार हो जाता है । इंद्रा साहनी मामले में दिए गए पाँच वर्ष के स्थगन आदेश को देखते हुए, अर्हताओं-मानदंडों में ढील देने के विषय पर दिए गए विधिक परामर्श को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक वर्ग अपने तात्कालिक स्वार्थ के लिए संविधान के अंतर्गत रखे गए आदर्श की योजना को भी बिगाड देने में कोई कसर नहीं छोडेगा।

....शेष अगले अंक मे

अरूण शौरी की पुस्तक 'आरक्षण का दंश' से साभार

सामने आते जा रहे जातीय आरक्षण के रक्तबीजी स्वरूप को प्रदेश सरकारों की बढती सहमती

आरक्षण की सीमा 50 फीसदी से ज्यादा बढ़ाना चाहते हैं कई राज्य

सुप्रीम कोर्ट ने सरकारी नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में आरक्षण की 50 फीसदी तय सीमा में बदलाव को लेकर राज्यों से राय मांगी थी। देश के आधा दर्जन राज्य ऐसे हैं जो आरक्षण का दायरा 50 फीसदी से ज्यादा करने के पक्ष में खड़े हैं। ये राज्य आरक्षण के दायरे को बढ़ाकर अपने राजनीतिक और सामाजिक समीकरण को मजबूत करना चाहते हैं

महाराष्ट्र के मराठा समुदाय के आरक्षण मामले पर सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने सरकारी नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में आरक्षण की 50 फीसदी की तय सीमा में बदलाव को लेकर राज्यों से राय मांगी थीण् देश के आधा दर्जन राज्य ऐसे हैं, जो 50 फीसदी आरक्षण का दायरा बढ़ाने के पक्ष में खड़े है। इनमें महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु, झारखंड और कर्नाटक जैसे राज्य शामिल हैं, जो आरक्षण के दायरे को बढ़ाकर अपने राजनीतिक और सामाजिक समीकरण को ण्ण्ण् मजबूत करना चाहते हैं।

दरअसल, साल 1992 में सुप्रीम कोर्ट ने इंदिरा साहनी मामले में ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए जाति.आधारित आरक्षण की अधिकतम सीमा 50 फीसदी तय कर दी थी।

सुप्रीम कोर्ट के इसी फैसले के बाद कानून ही बन गया कि 50 फीसदी से ज्यादा आरक्षण नहीं दिया जा सकता। इसके चलते राजस्थान में गुर्जर, हरियाणा में जाट, महाराष्ट्र में मराठा, गुजरात में पटेल जब भी आरक्षण मांगते हैं तो सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला आड़े आ जाता है

हालांकि, साल 2019 में मोदी सरकार ने पिछले दिनों सामान्य वर्ग को आर्थिक आधार पर 10 प्रतिशत आरक्षण देने के लिए संविधान में संशोधन का विधेयक संसद के दोनो से पारित करवा दिया। इससे आरक्षण की अधिकतम 50 फीसदी सीमा के बढ़कर 60 प्रतिशत हो जाने का रास्ता आसान हो गया है। वहीं, अब मराठा आरक्षण पर सुप्रीम कोर्ट ने राज्य की राय जाननी चाही तो तमाम प्रदेशों की सरकार 50 फीसदी आरक्षण के दायरे के बाहर निकलना चाहती हैं।

येदियुरप्पा का आरक्षण बढ़ाने का प्लान

कर्नाटक की बीएस येदियुरप्पा सरकार ने कैबिनेट की बैठक में यह फैसला लिया है कि 50 फीसदी आरक्षण के दायरे को बढ़ाया जाए क्योंकि सामाजिक परिदृश्य पूरी तरह से बदल गया है और और पिछड़े वर्ग की आकांक्षाएं बढ़ी ह। इसे लेकर कर्नाटक सरकार सुप्रीम कोर्ट में अपनी राय रखेगी। कर्नाटक में अनुसूचित जातियों के लिए 15 फीसदी, एसटी के लिए 3 फीसदी और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 32 फीसदी आरक्षण प्रदान किया जाता है, जो कुल मिलाकर 50 फीसदी होता है।

दरअसल, राज्य में लंबे समय से पंचमसाली लिंगायत, कुरूबा और वाल्मिकी समुदाय अलग.अलग श्रेणी में आरक्षण की मांग कर रहे है। पंचमसाली समुदाय 2ए श्रेणी का दर्जा देने की मांग कर रहा है तो वहीं कुरूबा समुदाय अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने की मांग कर रहा है। वाल्मीकि समुदाय की भी मांग है कि अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षण को तीन से बढ़ाकर 7.5 प्रतिशत किया जाए। यही वजह है कि सीएम येदियुरप्पा आरक्षण के दायरे को 50 फीसदी से ज्यादा बढ़ाने के पक्ष में फैसले ले रहे है।

राजस्थान भी चाहता है 50 फीसदी से ज्यादा आरक्षण

राजस्थान की अशोक गहलोत सरकार आरक्षण की सीमा 50 फीसदी से आगे बढ़ाने के पक्ष में है। इसके लिए बाकायदा गहलोत सरकार सुप्रीम कोर्ट में इस मसले पर अपना पक्ष मजबूत से रखेगी, जिसके लिए पिछले दिनों कैबिनेट में इस पर चर्चा भी हुई। राजस्थान सरकार इस बात से सहमत है कि आरक्षण की 50 फीसदी सीमा पर पुनर्विचार करना चाहिए और उसे बढ़ाए जाना चाहिए। दरअसल, राजस्थान में गुर्जर समुदाय के अलग से आरक्षण की मांग काफी लंबे समय से हो रही है, जिसे लेकर कई बार कदम उठाए गए। लेकिन, कोर्ट में इसे कानूनी मंजूरी नहीं मिल पाती है। अब जब सुप्रीम कोर्ट ने ही राज्य सरकार से 50 फीसदी आरक्षण पर राय मांगी तो गहलोत सरकार के मन की मुराद पूरी हो गई।

तमिलनाडु में पहले से 69 फीसदी आरक्षण

तमिलनाडु में काफी पहले से ही आरक्षण का दायरा 50 फीसदी से कहीं ज्यादा है। यहां पर रिजर्वेशन संबंधित कानून की धारा.4 के तहत 30 फीसदी रिजर्वेशन पिछड़ा वर्ग, 20 फीसदी अति पिछड़ा वर्ग, 18 फीसदी एससी और एक फीसदी एसटी के लिए रिजर्व किया गया है। इस तरह से तमिलनाडु में कुल 69 फीसदी रिजर्वेशन दिया जा रहा है। तमिलनाडु रिजर्वेशन एक्ट 69 फीसदी रिजर्वेशन की बात करता है, जिसे लेकर कोर्ट में याचिका भी पड़ी है। याचिका में कहा गया है कि इंदिरा साहनी जजमेंट में सुप्रीम कोर्ट के 9 जजों की बेंच ने कहा था कि रिजर्वेशन के लिए 50 फीसदी की सीमा है। तमिलनाडु में चुनाव हो रहे हैं, जिसके चलते सुप्रीम कोर्ट में इस मामले पर कोई राय नहीं रखी गई है।

झारखंड की हेमंत सोरेन सरकार भी आरक्षण बढ़ाने के पक्ष में

झारखंड की हेमंत सोरेन की अगुवाई वाली सरकार भी राज्य में 50 फीसदी से अधिक आरक्षण बढ़ाने के लिए सुप्रीम कोर्ट में पक्ष रखेगी। मालूम हो कि सर्वोच्च न्यायालय ने सभी राज्यों से आरक्षण की सीमा बढ़ाने पर उनका पक्ष मांगा है। इसको लेकर मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन ने विधानसभा सदन में आरक्षण की सीमा 50 फीसद से अधिक बढ़ाने की बात कही है। इसके पीछे असल वजह यह है कि झारखंड में काफी लंबे समय से ओबीसी समुदाय 14 फीसदी आरक्षण को बढ़ाकर 27 फीसदी करने की मांग कर रहा है, जिसे लेकर हेमंत सोरेन चुनाव में वादा भी कर चुके है।

मौजूदा समय में झारखंड में अनुसूचित जनजाति को 26 फीसदी, अनुसूचित जाति को 10 फीसदी, ओबीसी को 14 फीसदी और आर्थिक रूप से पिछड़ी सवर्ण जातियों को 10 फीसदी ओबीसी को 14 फीसदी और आर्थिक रूप से पिछड़ी सवर्ण जातियों को 10 फीसदी आरक्षण मिल रहा है। इस तरह से 60 फीसदी आरक्षण है। वहीं, ओबीसी के आरक्षण को 14 से 27 फीसदी करने पर कुल आरक्षण 73 फीसदी हो जाएगा। इसीलिए हेमंत सोरेन सुप्रीम कोर्ट में आरक्षण के दायरे को बढ़ाने के पक्ष में खुलकर खड़े हैं।

महाराष्ट्र में मराठा आरक्षण की मांग

महाराष्ट्र सरकार भी आरक्षण के दायरे को 50 फीसदी से ज्यादा बढ़ाने की मांग सुप्रीम कोर्ट में पहले ही रख चुकी है इसके पीछे वजह साफहै कि राज्य में मराठा आरक्षण की मांग काफी लंबे समय से हो रही थी, जिसे लेकर राज्य सरकार ने 2018 में मराठा समुदाय को 16 फीसदी आरक्षण देने का फैसला किया था।

सरकार के इस फैसले को लेकर बॉम्बे हाईकोर्ट में याचिका दायर की गई, जिस पर सुनवाई करते हुए कोर्ट ने जून 2019 में आरक्षण के दायरे को 16 फीसदी से घटाकर शिक्षा में 12 फीसदी और नौकरी में 13 फीसदी आरक्षण देना तय कर दिया था।साथ ही हाईकोर्ट ने कहा कि अपवाद के तौर पर राज्य में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित 50 फीसदी आरक्षण की सीमा पार की जा सकती है।

बॉम्बे हाईकोर्ट के मराठा आरक्षण पर दिए गए फैसले को लेकर सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दे दी गई। सुप्रीम कोर्ट के तीन जजों की बेंच ने मराठा आरक्षण पर सुनवाई करते हुए इंदिरा साहनी केस या मंडल कमीशन केस का हवाला देते हुए इस पर रोक लगा दी। साथ ही सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस मामले की सुनवाई के लिए बड़ी बेंच बनाए जाने की आवश्यकता है। मराठा आरक्षण के लिए पांच जजों की बेंच इस मामले की सुनवाई कर रही है।

इस मामले में सरकार साफ तौर पर कह चुकी है कि आरक्षण के दायरे को बढ़ाया जाए।

केरल चुनाव के चलते नहीं लिया फैसला

तमिलनाडु की तरह केरल में भी विधानसभा चुनाव हो रहे हैं, ऐसे में सरकार की ओर से सुनवाई टालने की अपील की गई है। सरकार कहना है कि चुनावों के कारण इस सुनवाई को टाल देना चाहिए, क्योंकि ये पॉलिसी से जुड़ा फैसला होगा।ऐसे में सरकार अभी कोई पक्ष नहीं ले सकती है।

हालांकि, सुप्रीम कोर्ट का कहना है कि सरकार के पास अपना जवाब देने के लिए एक हफ्ते का वक्त है। सरकारें अपना लिखित जवाब तैयार करें और और अदालत को दें। अभी सिर्फइस चीज़ पर फोकस है कि इंद्रा साहनी जजमेंट को फिर से देखने की जरूरत है या नहीं।

बी. एल. विजय
प्रदेशाध्यक्ष
स्कूल शिक्षा प्रकोष्ठ, समता आन्दोलन, राजस्थान

एक अनुकरणीय व्यक्तित्व बी. एल. विजय

बावजूद जाती आरक्षण के अभी भी देश प्रदेश में कहीं-कहीं शिक्षा और शिक्षक के दिव्य उदाहरण देखने को मिल जाते है। उनमें से एक है- बी. एल. विजय ।

आपा-धापी के इस दौर में एक संतुलित और सांस्कृतिक जीवन जीने वाले विजय सुबह चार बजे सक्रिय होते है और दैनिक दिनचर्या में हर पल एक सक्रियता, एक मनोयोग और सम्पूर्ण समर्पण का उदाहरण प्रस्तुत करते है।

देवयोग से समता आन्दोलन की स्थापना से कई सालों बाद 2018 के अप्रेल से आपने पहले समता ग्रुप की स्थापना की। तब से लगातार समता सिपाही के रूप में सक्रिय है। यह चौकाने वाला तथ्य है कि बी.एल.विजय अब तक लगभग 70 हजार समता आन्दोलन के सदस्य बना चुके है और इन सारे सदस्यों से सतत सम्पर्क रखने के लिए 230 व्हाटस-एप ग्रुप बनाये है, जिनमें 10 ग्रुप राष्ट्रीय स्तर के है।

यदि अवढर दानी शब्द का वर्तमान उदाहरण देखना हो तो बी.एल.विजय इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है। 2018 में सुप्रीम कोर्ट के खर्च के लिए आपने समता कोष में 03 लाख रूपये जमा करवाये। यह केवल शुरूआत मात्र थी। आगे 2021 में आपने सुप्रीम कोर्ट के खर्चे के लिए ही पूरे राजस्थान से सम्पर्क बनाकर लगभग 08 लाख रूपये समता आन्दोलन के कोष में जमा करवाये। वे अभी रूके नहीं है और प्रतिमाह 10 स्थायी सदस्यों को वे समता आन्दोलन से जोड़ रहे है। 16 मई 2020 को उन्हें स्कूल शिक्षा सेवा के प्रदेशाध्यक्ष का दायित्व सौपा गया।

वैचारिक धरातल पर वे किसी सम्पादक, साहित्यकार या लेखक से किसी भी दृष्टि में कम नहीं है। वे प्रतिदिन सभी 230 ग्रुपों के सदस्यों को समता आन्दोल के लिए प्रेरक और प्रोत्साहन की विचारोतेजक रचनाएँ भेजते है, जिन्हें पढकर अनजान से अनजान व्यक्ति भी जातिगत आरक्षण के दोषों से नफरत करने लगता है।

मृदुभाषी और ठण्डे स्वाभाव के बी.एल.विजय सेवानिवृति के बाद भी या यू कहे सेवनिवृति के बाद तो पहले से भी अधिक सक्रिय और गुणवंत दिखाई देते है। समता आन्दोलन के जो देश भर में हजारों सदस्य है उनमें बी.एल.विजय को आदर्श और अनुकरणीय माना जा सकता है। हम उनके उन्नत भविष्य की कामना करते है।

न कोई जाति न कोई वर्ण सारे भारतीय सवर्ण।

प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी-समता आंदोलन समिति, प्रकाशन स्थान- 68, भारतेन्दु नगर, खातीपुरा, जयपुर, मुद्रण स्थान- इन्दु प्रिण्टर्स, कुचीलपुरा बीकानेर, सम्पादक-योगेश्वर शर्मा। Website:www.samtaandolan.co.in